INDIAN STREAMS RESEARCH JOURNAL
ISSN NO : 2230-7850
IMPACT FACTOR : 5.1651 (UIF)
VOLUME - 11 | ISSUE - 10 | NOVEMBER - 2021

शिरीष कुमार मौर्य की कृति 'ऐसी ही किसी जगह लाता है प्रेम' का समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ. विशाल श्रीवास्तव
असि. प्रो. : हिन्दी, राजकीय महाविद्यालय, पचवस–बस्ती

शोध–सार :

यह शोध–पत्र शिरीष कुमार मौर्य की कृति 'ऐसी ही किसी जगह लाता है प्रेम' का समीक्षात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है, जिसमें समकालीन हिन्दी कविता के संदर्भ में प्रेम, संवेदना और मानवीय संबंधों के बदलते स्वरूप का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि इस काव्य–संग्रह में प्रेम को केवल पारंपरिक भावुकता या रोमानी अनुभव के रूप में नहीं, बल्कि एक गहन मानवीय, सामाजिक और अस्तित्वगत अनुभूति के रूप में प्रस्तुत किया गया है। कवि ने प्रेम को जीवन के विविध आयामोंकृ जैसे अकेलापन, स्मृति, विस्थापन, आत्मीयता और सामाजिक यथार्थकृसे जोड़ते हुए उसकी बहुआयामी व्याख्या की है। काव्य में प्रयुक्त भाषा सहज, बिंबात्मक और संवादधर्मी है, जो पाठक को आत्मीय स्तर पर जोड़ती है। साथ ही, यह कृति आधुनिक जीवन की जटिलताओं के बीच प्रेम की संभावनाओं और उसकी मानवीय गरिमा को पुनर्स्थापित करने का प्रयास करती है। निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि यह काव्य–संग्रह समकालीन हिन्दी कविता में प्रेम के नवीन विमर्श और संवेदनात्मक विस्तार का महत्वपूर्ण उदाहरण है।

कुंजी शब्द :

प्रेम–विमर्श, समकालीन हिन्दी कविता, संवेदना, मानवीय संबंध, अस्तित्वबोध, स्मृति, अकेलापन, काव्यभाषा, सामाजिक यथार्थ, भावबोध

इतनी पवित्रता
कभी–कभी बदल जाती है प्यार में
और सवाल जो पूछे जाते हैं इन पहाड़ों में
वहीं हैं, जो पूछे जाते रहे हैं हमेशा से–
''क्या तुमने मेरी भेड़ देखी?''
''क्या तुमने मेरा गड़रिया देखा?''
और मेरे घर का दरवाज़ा खुला रहता है
किसी कब्र की तरह
जहाँ पुनर्जीवित किया गया था कोई

('जियान के गीत शृंखला से येहूदा आमिखाई की कविता)

'ऐसी ही किसी जगह लाता है प्रेम' शिरीष कुमार मौर्य का नया कविता संग्रह है, जिसमें 2004 से लेकर 2013 के बीच लिखी उनकी कविताएँ संकलित हैं। इस संग्रह का एक उपशीर्षक भी है– ''अपनी धरती अपने

पहाड़'। न जाने क्यों, यह उपशीर्षक अपनी ओर गहरा ध्यान खींचता हुआ दिखता है, यह एक प्रकाशित पंक्ति है। ऐसा सम्भवतः इसलिए भी हो सकता है कि समकालीन कविता में एक ओर फैली 'उदरम्भरि अनात्मता' और दूसरी ओर की 'अतिशय राजनैतिकता' के बीच हम उन असल स्रोतों की की ओर दृष्टि करना भूलना गये हैं, जिनमें से एक ये पहाड़ भी हैं। हमारी काव्याभा, जो कहीं भीतर की एक चमक से उपजती है, इन स्रोतों के बिना बुझती जाती है। एक कवि का पहाड़ से रिश्ता, सिर्फ उसके सौन्दर्य से नहीं, बल्कि उसके झरनों के संगीत, वहाँ बसने वाले लोगों के जीवन–संघर्ष और स्मृतियों के जमाव से बनता है। शिरीष के जीवन में पहाड़ पिपरिया से लेकर नैनीताल तक फैले हैं, उनका मिजाज़ भले ही अलहदा हो, लेकिन उदात्तता; वह तो सतपुड़ा की भी वैसी ही है, जैसी कुमाऊँ के पहाड़ों की। पिपरिया से पंचमढ़ी जाते समय हर पहाड़ी जगह की तरह आपका साथी पथ–प्रदर्शक आपको एक ख़ास रोककर घाटी में अपना (या किसी का भी) नाम पुकारने को कहकर आने वाली प्रतिध्वनि को सुनने को कहेगा। इस संग्रह की कविताएँ भी कुछ–कुछ ऐसी ही हैं, वे पहाड़ के बारे में 'लिखी हुई' कविताएँ नहीं, बल्कि कवि की आत्मीय पुकार से उपजी प्रतिध्वनियाँ हैं।

संग्रह की भूमिका वरिष्ठ कवि हरीश चन्द्र पाण्डे ने लिखी है, उनकी इस सुचिंतित भूमिका में न जाने क्यों उन्होंने कवि के 'ज्योतिष' प्रेम का जिक्र किया है, यह बात मुझे अचम्भित और स्थगित करने वाली लगी। मुझे कवि के संग्रह और जीवन, दोनों में ज्योतिष या उस जैसा कुछ कहीं नहीं दिखता। बरहहाल, इस भूमिका में जो सबसे महत्त्वपूर्ण बात कही गयी है, वह यह कि ये सिर्फ 'नास्टैल्जिक' कविताएँ नहीं हैं, बल्कि समग्र दृष्टि से प्रेरित हैं। यह इन कविताओं को देखने का एक अच्छा एंगल हो सकता है, क्योंकि विशुद्ध नास्टैल्जिया से उपजी कविताओं में एक तरह का बासी लिजलिजापन बस जाता है। इस दृष्टि से ये कविताएँ इस दोष से मुक्त हो जाती हैं।

संग्रह की पहली कविता 'गैंगमेट वीर बहादुर थापा' में कवि एक अदृश्य नायक को याद कर रहा है, जिसने सड़क बनाने में अपना श्रम लगाया, बिना कुछ जाने या समझे। किन्तु, उसका नाम अनायास ही सड़क के इतिहास में शामिल हो जाता है। कवि लिखता है–

उन सरल हृदय असभ्यों को नहीं
हमारी सभ्यता को होगी
बर्बरता की तरफ जाने के लिए

यहाँ कवि स्थानीय सन्दर्भों को वैश्विक और व्यापक बिम्ब प्रदान करता है। यह कितना बड़ा सच है कि सड़क की ज़रूरत सभ्यता को ही है, जो निरन्तर बर्बरता की ओर बढ़ती जा रही है। इन पंक्तियों को पढ़ते हुए बहुत पहले रोहतांग पर देखे वे गड़रिये याद आते हैं, जो सड़क पर नहीं चलते और खड़ी चढ़ाईयों से पहाड़ पार करते हैं। सहज और साधारण संदर्भ की यह कविता एक विचलित कर देने वाले सार्वभौमिक सत्य पर आकर समाप्त होती है।

दूर दिखते हिमालय के शिखरों के बारे में अपने बेटे से बात करते हुए कवि 'रानीखेत से हिमालय' शीर्षक कविता लिखता है (और यह संयोग ही है कि इन पंक्तियों का लेखक भी इस दृश्य का साक्षी रहा है)। कवि ने एक किशोर होते बालक को पहाड़ों के बनने की भौगोलिक प्रक्रिया के माध्यम से जीवन के कुछ सच बताने की कोशिश की है। यह कविता सूक्तियों की शैली में कुछ बातें कहती है, जैसे–

जब धरती अलग होने का फैसला करती है
तो खाईयाँ बनती हैं
और जब मिलने का
तब बनते हैं पहाड़
या फिर, ये पंक्तियाँ–
बिना किसी से मिले यों ही
इतना ऊँचा नहीं उठ सकता कोई

यहाँ कवि भूगोल के सच से आगे दार्शनिक सत्यों तक जाने की बात करता है। यहाँ भी पहाड़ मौजूद हैं, पर कवि उन्हें उदात्त बनाते हुए यह बताता है कि वे धरती की सिकुड़न मात्र नहीं हैं, उनका अस्तित्व एक विराट मिलन की परिणति है, ये प्यारे पहाड़ भी दरअसल प्रेम की ही उपज हैं।

'टीकाराम पोखरियाल की वसन्त कथा' कविता के शिल्प में लिखी गयी एक कहानी ही है। किशोर जीवन के स्त्री–सम्बन्धी अनुभवों पर लिखी गयी कई कवितायें हैं, कुछ एक कहानियाँ भी, और उन सबमें उस उद्दाम भावना का आवेग है, जो कैशोर्य में सर्वाधिक तीव्र होती है। पर, पहली बार कवि ने उस स्त्री की ओर से बात की है, जो इस आवेग का हिस्सा है। यह एक बारीक़–सा हस्तक्षेप है, जिसके माध्यम से कवि अचानक हमें उस स्त्री के बारे में देह से ऊपर उठकर सोचने को विवश करता है–

उस औरत के बसन्त को किसने देखा
क्या वह कभी आया भी
उस परित्यक्ता के जीवन में
जो कुलटा कहलाती लौट आयी थी

टीकाराम के वसन्त के समांतर एक दूसरे असम्भव वसन्त की यह कल्पना मार्मिक है। कवि ने कविता के अन्त में कवि वीरेन डंगवाल के हवाले से लिखा है कि 'प्रेम खुश और तबाह करता है', सवाल यह है कि किसे खुश और किसे तबाह करता है। टीकाराम घर बसाकर सुरक्षित जीवन जीता है और वह स्त्री दूसरों के घरों में बासन मलते हुए जीवन बिताती है। प्रेम में क्या अन्ततः एक स्त्री को ही अपना बसन्त हारना होता है?

'काफल बेचते बच्चे' पहाड़ों के बीच खोते बचपन की कविता है। इस कविता में पूरी सहजता के साथ कवि छोटे–छोटे सन्दर्भों को बड़े सवालों से जोड़ता चलता है–

कहाँ है? कहाँ है?
मेरे हिस्से का वन?

अनियंत्रित विकास की सबसे बड़ी कीमत पहाड़ों ने ही चुकाई है। ग़ौरतलब है कि शिरीष की कविता में ये चिंतायें किसी लाउड स्टेटमेंट की तरह शोर करती हुई नहीं, बल्कि बेहद शान्त स्वर में आती हैं। ये प्रश्न कवि को अपने भीतर से उठते हुए दीखते हैं –

मेरी आँखों को पढ़ती उनकी बेदाग़ आँखें कहती हैं गोया
हमने खोया है बचपन हमारा
तो सोचिए साब कितनी बड़ी
कितनी खूबसूरत एक दुनिया
आपने भी खोई!

'शरदस्य प्रथम दिवसे' एक दृश्य कविता है। कवि ने कविता में ही कहीं लिखा भी है–

दरअसल मुझे कुछ भी नहीं करना था उस खूबसूरत दृश्य में

कवि यहाँ एक अनाम से स्थगन की बात करता है। यह खुद से धीमा सा संवाद करती एक कविता है, जिसमें कवि इन दृश्यों में अपनी एकान्तिकता की पड़ताल कर रहा हो–

ऐसी ही किसी जगह लाता है प्रेम
हम जहाँ से कहीं नहीं जाते
वहाँ से कोई नहीं आता हमारे पास

'जब रात के दो बजते हैं' एक ऐसी कविता है, जिससे हर संवेदनशील कवि खुद को जोड़ सकता है। पुरखे कवि द्वारा कही 'जागने और रोने' की बात यूँ ही तो नहीं है। कवि रात के दो बजे विस्मय में है कि ककड़ी के आकार वाला हरा ताल उसी का है; उम्मीद से भरा है कि उसका सात साल का बच्चा नींद में हँसता, मुस्कुराता और बिसूरता है और प्रयास में है कि आने वाले दिन के लिए थोड़ी मनुष्यता बचा सके। रात का यह इस्तेमाल हर कवि करता है, रात ही उसे शक्ति देती है, शायद दिन से लड़ने के लिए।

'शरद की रातें' कवि की एक दूसरी कविता है जो 'शरदस्य प्रथम दिवसे' से आगे की बात करती है। पहाड़ के सामूहिक दुःख और विलाप को अनुभव करता हुआ कवि शरद की इन रातों में नींद से बाहर है। ये पंक्तियाँ इस कविता की उपलब्धि हैं–

हमारे कितने ही बाआवाज़–बेआवाज़ विलापों का
भार लिये
जब झुकी हुई घूमती है पृथ्वी
तो हमारे अक्षांश के कितने हजारवें अंश पर
गिरते हैं उसके आँसू

'एक कस्बे के नये नोट्स' इस संग्रह की अत्यन्त सशक्त कविता है। कविता के केन्द्र में एक ख़ास शहर में बेरोज़गारी और असफल प्रेम के किस्सों पर दृष्टि है। सड़क किनारे पड़ा रहने वाले एक पागल के बारे में कवि कहता है–

वह हाथ पर लगे वीर्य को सूँघता है देर तक
और उसकी निरर्थकता पर उदास होता है

किसी भी शहर में इस तरह के दृश्य मिल जायेंगे, पर महत्वपूर्ण है उनकी सम्बद्धता; जब कवि कहता है कि–

इस तरह बेरोज़गारी और प्रेम में असफलताएँ
सरकार के आबकारी राजस्व को बढ़ाने में सहायक होती हैं

कवि अपने आस–पास के युवाओं को झगड़ते, प्रेम में तबाह होते, पागल होते देखता है और यह जानते हुए कि यह सब हस्बे मामूल है, अन्ततः विचलित होता है। यह विचलन ही मनुष्यता है, इसी के कारण कवि बने रह पाने की सम्भाव्यता भी है। इसी आत्म संकोच में डूबा कवि कहता है–

चाँद बेमतलब चमकता रहता है
चीड़ हिलते रहते हैं
और मैं पाता हूँ कि
मेरा कवि अन्ततः मनुष्यता के दुर्दिनों का कवि है
जो अपनी पीड़ा, प्रेम और क्रोध के सहारे जीता है
शराब पीनी छोड़ दी है जिसने कभी की
अब बस अपने भीतर का अब्रो आब पीता है।

इसी तरह, इस संग्रह की बहुत सारी कविताएँ हैं जो विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, जैसे 'ख़तरा है', 'बारिश की रस्सी पर', 'फ़रेब', 'नैनीताल', 'रात में शहर', 'चाँदनी डीलक्स' इत्यादि। समग्रतः, ये सभी कविताएँ पहाड़ के जीवन और स्मृतियों पर केन्द्रित होते हुए भी बेहद बड़े, आवश्यक और सार्वभौम विषयों पर तार्किक मगर संवेदनापूर्ण दृष्टि से हमारा ध्यान आकृष्ट करती हैं। तमाम बाहरी दबावों के बावजूद इस संग्रह की

कविताओं में शिल्प या भाषा के स्तर पर किसी सायास प्रयोग के लक्षण नहीं दिखते। चूँकि ये कविताएँ एक लम्बे कालखण्ड में लिखी कविताओं में से एक विशेष चयन के रूप में प्रकाशित की गयी हैं, इनके आधार पर कवि के काव्य–व्यक्तित्व की कोई निर्णायक पड़ताल नहीं की जा सकती। फिर भी, इतना अवश्यक स्पष्ट होता है कि कवि की ये कविताँ एक प्रौढ़ कवि द्वारा लिखी सान्द्र जीवनानुभव की कविताएँ हैं, इन्हें किसी तय एजेन्डे से सम्बद्ध नहीं किया जा सकता है। ये भीतर के अँधेरे को चमकाकर हमें जगाने वाली कविताएँ हैं, इन्हें पढ़ना अपने अस्तित्व की सुखद यात्रा से गुज़रना है।

संदर्भ–ग्रंथ–सूची :

1. शिरीष कुमार मौर्य. (2015). ऐसी ही किसी जगह लाता है प्रेम. साहित्य भंडार, इलाहाबाद।
2. ईगलटन, टेरी. (2008). लिटरेरी थ्योरी : एन इंट्रोडक्शन. ब्लैकवेल।
3. जेमसन, फ्रेडरिक. (1981). द पॉलिटिकल अनकॉन्शस. कॉर्नेल यूनिवर्सिटी प्रेस।
4. नामवर सिंह. (2002). इतिहास और आलोचना. राजकमल प्रकाशन।
5. रामविलास शर्मा. (1990). भारतीय साहित्य की भूमिका. राजकमल प्रकाशन।
6. कंवल भारती. (2010). दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र. वाणी प्रकाशन।
7. ओमप्रकाश वाल्मीकि. (2001). दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र. राधाकृष्ण प्रकाशन।
8. मृणाल पांडे. (2015). स्त्री : देह की राजनीति से देश की राजनीति तक. राजकमल प्रकाशन।
9. अनामिका. (2013). स्त्रीत्व का मानचित्र. वाणी प्रकाशन।
10. मैनेजर पांडेय. (2006). साहित्य और इतिहास दृष्टि. वाणी प्रकाशन।
11. विश्वनाथ त्रिपाठी. (2010). लोक और साहित्य. राजकमल प्रकाशन।
12. गजानन माधव मुक्तिबोध. (1980). नयी कविता का आत्मसंघर्ष. राजकमल प्रकाशन।
13. अशोक वाजपेयी. (2014). कला का जोखिम. राजकमल प्रकाशन।
14. राजेश जोशी. (2016). कविता का लोकतंत्र. राजकमल प्रकाशन।
15. अल्थुसर, लुई. (1971). लेनिन एंड फिलॉसफी एंड अदर एसेज. मंथली रिव्यू प्रेस।
16. सईद, एडवर्ड डब्ल्यू. (1978). ओरिएंटलिज्म. पेंगुइन बुक्स।